४. हिन्दुशब्दकी प्राचीनता तथा शास्त्रसम्मतता

प्रश्न उठता है कि आर्य, वैदिक और सनातनी – शब्द शास्त्रसम्मत और परम्पराप्राप्त होनेपर भी क्या हिन्दु या हिन्दू – शब्द भी शास्त्रसम्मत और परम्पराप्राप्त है? अधिकांश बुद्धिजीवियोंकी धारणा तो यही है कि **हिन्दू** – नाम मुसलमानोंका रक्खा हुआ है, जो कि चोर आदि हीनताका वाचक है।

परन्तु वस्तुस्थिति यह है कि मुहम्मद और ईसासे भी सैकड़ों वर्ष पूर्व हिन्दु और हिन्दू – शब्दका प्रयोग सौम्य, सुन्दर, सुशोभित, शीलनिधि, दमशील और दुष्टदलनमें दक्ष – अर्थोंमें प्रयुक्त और प्रचलित था। सिकन्दरने भारतमें आकर अपने मन्त्रीसे हिन्दूकुश (हिन्दूकूट) पर्वतके दर्शनकी इच्छा व्यक्त की थी। पारसियोंके धर्मग्रन्थ शातीरमें हिन्दूशब्दका उल्लेख है। अवेस्तामें हजारों वैदिक शब्द पाये जाते हैं। सिकन्दरसे भी सैकड़ों वर्ष पूर्वका यह ग्रन्थ है। उसमें हिन्दू – शब्दका प्रयोग है। बलख नगरका नाम पूर्वकालमें हिन्दवार था।

'स' के स्थानपर 'ह' का प्रयोग प्रसिद्ध है। सप्तको हप्त, सरस्वतीको हरहवती, सरित् को हरित्, केसरीको केहरी, असुरको अहुर – कहनेकी विधा और प्रथा है।

भविष्यपुराणमें हिन्दुस्थानको सिन्धुस्थान – आर्योंका राष्ट्र कहा गया है–

"सिन्धुस्थानमिति ज्ञेयं राष्ट्रमार्यस्य चोत्तमम्।"

कालिकापुराण और शार्ङ्गधरपद्धतिके अनुसार वेदमार्गका अनुसरण करनेवाले हिन्दु मान्य हैं –

बलिना कलिनाऽऽच्छन्ने धर्मे कवलितौ कलौ।
यवनैरवनिः क्रान्ता हिन्दवो विन्ध्यमाविशन्।।
कालेन बलिना नूनमधर्मकलिते कलौ।
यवनैर्घोरमाक्रान्ता हिन्दवो विन्ध्यमाविशन्।।
(कालिकापुराण)

यवनैरवनिः क्रान्ता हिन्दवो विन्ध्यमाविशन्।
बलिना वेदमार्गोऽयं कलिना कवलीकृतः।।
(शार्ङ्गधरपद्धति)

''कालबलीके कुचक्रके कारण कलिमें अधर्मसे वैदिक धर्मके आच्छन्नहो जानेपर तथा घोर आक्रान्ता यवनोंसे भारतके विविध भूभाग उत्पीडित हो जानेपर हिन्दू विन्ध्यपर्वत चले गये।।''

हिमालयका प्रथम अक्षर 'ह्' है। इन्दुसरोवर (कुमारी अन्तरीप)के प्रारम्भके दो अक्षर 'इन्दु' हैं। ह् + इन्दु = हिन्दु होता है।

बृहस्पति आगमके अनुसार हिमालयसे इन्दुसरोवरतकका देवनिर्मित भूभाग हिन्दुस्थान कहा जाता है। इसमें परम्परासे निवास करनेवाले और उनके वंशधर हिन्दु कहे जाते हैं –

हिमालयं समारभ्य यावदिन्दुसरोवरम्।
तं देवनिर्मितं देशं हिन्दुस्थानं प्रचक्षते।।
(बृहस्पति – आगम)

''. 'हि '– शब्दोपलक्षित हिमालय समझना चाहिये। 'न्दु' – शब्दोपलक्षित कुमारी अन्तरीप – इन्दुसरोवर – कन्याकुमारी समझना चाहिये। हिमालयसे कुमारी अन्तरीप – पर्यन्त देवविनिर्मित भूभागको हिन्दुस्थान कहते हैं।।''

आसमुद्राच्च यत् पूर्वादासमुद्राच्च पश्चिमात्।
हिमाद्रिविन्ध्ययोर्मध्यमार्यावर्तं प्रचक्षते।।
(महाभारत – आश्वमेधिकपर्व ९२. दाक्षि.)

''पूर्वमें समुद्रसे लेकर पश्चिममें समुद्रपर्यन्त तथा उत्तरमें हिमालयसे लेकर दक्षिणमें विन्ध्यपर्वतपर्यन्त आर्यावर्त कहा जाता है।।''

वृद्धस्मृतिके अनुसार हिंसासे दुःखित होनेवाला, सदाचरणतत्पर (वर्णोचित आचरण - सम्पन्न) , वेद -गोवंश और देवप्रतिमासेवी हिन्दू समझने योग्य है -

हिंसया दूयते यश्च सदाचारतत्परः।
वेदगोप्रतिमासेवी स हिन्दुमुखशब्दभाक्।।
(वृद्धस्मृति)

भविष्यपुराण - प्रतिसर्गपर्व - प्रथमखण्ड ५.३६ में **'सप्तसिन्धुस्तथैव च । सप्तहिन्दुर्यावनी च '** - हिन्दु - शब्दका प्रयोग किया गया है। पश्चिमी देशोंमें एकमात्र इसी मार्गसे जानेके कारण भारत हिन्द कहा जाने लगा और भारतीय हिन्दु या हिन्दू - कहलाने लगे। स्वतन्त्रताके पूर्वतक पारस, ईरान, तुर्की, ईराक, अफगानिस्तान और अमरीकादिमें भारतको **'हिन्द'** और भारतीयोंको **'हिन्दू'** कहा जाता था।

अद्भुतकोषके अनुसार 'हिन्दु ' और 'हिन्दू' - दोनों शब्द पुँल्लिङ्ग हैं। दुष्टोंका दमन करनेवाले 'हिन्दु' और 'हिन्दू' - कहे जाते हैं। 'सुन्दररूपसे सुशोभित और दैत्योंके दमनमें दक्ष' - इन दोनों अर्थोंमें भी इन शब्दोंका प्रयोग होता है।

''**हिन्दु - हिन्दूश्च पुंसि दुष्टानां च विघर्षणे। रूपशालिनि दैत्यारौ....।।**''

हेमन्तकविकोषके अनुसार ''**हिन्दुर्हि नारायणादिदेवताभक्तः**''- "हिन्दु उसे कहा जाता है, जो कि परम्परासे नारायणादि देवताका भक्त हो।।"

मेरुतन्त्र - प्रकाश २३ के अनुसार ''**हीनं च दूषयत्येव हिन्दुरित्युच्यते प्रिये।**'' - ''हे प्रिये! जो हीनाचरणको निन्द्य समझकर उसका परित्याग करे, वह हिन्दु कहलाता है।''

शब्दकल्पद्रुमकोषके अनुसार **"हीनं दूषयति इति हिन्दू"**, **"पृषोदरादित्वात् साधुजातिविशेष:"** - "हीनताविनिर्मुक्त साधुजाति-विशेष हिन्दु है।"

पारिजातहरणनाटकके अनुसार -

''हिनस्ति तपसा पापान् दैहिकान् दुष्टमानसान्।
हेतिभिः शत्रुवर्गं च स हिन्दुरभिधीयते।।''

''जो अपनी तपस्यासे दैहिक पापों तथा चित्तको दूषित करनेवाले दोषोंका नाश करता है तथा जो शस्त्रोंसे शत्रु- समुदायका भी नाश करता है, वह हिन्दू कहलाता है।।''

रामकोषके अनुसार -

''हिन्दुर्दुष्टो न भवति नानार्यो न विदूषकः।
सद्धर्मपालको विद्वान् श्रौतधर्मपरायणः।।''

''हिन्दू दुर्जन नहीं होता, न अनार्य होता है, न निन्दक ही होता है। जो सद्धर्मपालक, विद्वान् और श्रौतधर्म - परायण है, वह हिन्दू है।।''

माधवदिग्विजयके अनुसार सनातनी, आर्यसमाजी, जैन, बौद्ध और सिक्खादिमें अनुगत लक्षणके अनुसार ओङ्कारको मूलमन्त्र माननेवाला, पुनर्जन्ममें दृढ आस्था रखनेवाला, गोभक्त और भारतीय मूलके सत्पुरुषद्वारा प्रवर्तित पथका अनुगमन करनेवाला तथा हिंसाको निन्द्य माननेवाला हिन्दू कहने योग्य है। -

ओङ्कारमूलमन्त्राढ्यः पुनर्जन्मदृढाशयः।
गोभक्तो भारतगुरुर्हिन्दुर्हिंसनदूषकः।।

वीरसावरकरके शब्दोंमें सिन्धुनदीसे लेकर समुद्रपर्यन्त भारतभूमि जिसकी पैतृक - सम्पत्ति और पवित्र भूमि हो, वही हिन्दु है-

आसिन्धोः सिन्धुपर्यन्ता यस्य भारतभूमिका।
पितृभूः पुण्यभूश्चैव स वै हिन्दुरिति स्मृतः।।

श्रीलोकमान्यतिलकके शब्दोंमें हिन्दुधर्मका लक्षण इस प्रकार है-

प्रामाण्यबुद्धिर्वेदेषु नियमानामनेकता।
उपास्यानामनियमो हिन्दुधर्मस्य लक्षणम्।।

"वेदोंमें प्रामाण्यबुद्धि, नियमोंमें देश, काल, व्यक्तिभेदसे अनेकता, सर्वेश्वर तथा उनके उत्पत्ति, स्थिति, संहृति, तिरोधान और अनुग्रह - संज्ञक पञ्चकृत्यनिर्वाहक हिरण्यगर्भात्मक सूर्य, विष्णु, शिव, शक्ति तथा गणपति एवम् इनके शास्त्रसम्मत विविध अवतारको उपास्यरूपसे प्रस्तुत करना - हिन्दुधर्मका लक्षण है।।"

उक्त रीतिसे -

"श्रुत्यादि प्रोक्तानि सर्वाणि दूषणानि हिनस्तीति हिन्दुः"

"श्रुति - स्मृति - पुराण - इतिहास - में निरूपित सर्व दूषणोंका जो हनन करे, वह हिन्दु है।"

श्रीविनोबाभावेके अनुसार-

यो वर्णाश्रमनिष्ठावान् गोभक्तः श्रुतिमातृकः।
मूर्तिं च नावजानाति सर्वधर्मसमादरः।।
उत्प्रेक्षते पुनर्जन्म तस्मान्मोक्षणमीहते।
भूतानुकूल्यं भजते स वै हिन्दुरिति स्मृतः।।
हिंसया दूयते चित्तं तेन हिन्दुरितीरितः।।

"जो वर्णों और आश्रमोंकी व्यवस्थामें आस्था रखनेवाला, गोभक्त, श्रुतियोंका समादर करनेवाला, सच्चिदानन्दस्वरूप सर्वेश्वरके विविध अवतारोंमें आस्थान्वित मूर्तिपूजक है, श्रौतस्मार्त तथा इनके अविरुद्ध सर्वधर्मोंके प्रति जिसके हृदयमें समादर है, जो पुनर्जन्मको मानता और उससे मुक्त होनेका प्रयत्न करता है और जो सदा सब प्राणियोंके अनूकूल वर्ताव करता है, वही हिन्दु माना गया है। हिंसासे उसका चित्त दुःखी होता है, अतः उसे हिन्दु कहा गया है।।"

सनातनशैलीमें हिन्दुकी परिभाषा इस प्रकार है-

"श्रुतिस्मृत्यादिशास्त्रेषु प्रामाण्यबुद्धिमवलम्ब्य

श्रुत्यादिप्रोक्ते धर्मे विश्वासं निष्ठां च यः करोति स एव वास्तव हिन्दुपदवाच्यः" (स्वामी – श्रीहरिहरानन्दसरस्वती 'करपात्रीजी')

"श्रुति – स्मृत्यादि शास्त्रोंमें प्रामाण्यबुद्धिका आश्रय लेकर उनमें कहे हुए धर्ममें जो विश्वास और निष्ठा करता है, वही वास्तवमें हिन्दु कहने योग्य है।।"

'ग्यासलुगात' आदिमें विद्वेषवश हिन्दुका अर्थ गुलाम, चोर, काफिर किया गया है। शरीरका अर्थ उपद्रवी, देवका अर्थ राक्षस, रामका अर्थ गुलाम, आर्यका अर्थ अश्व – गर्दभादि – शाला तथा अश्वादिका हीनाङ्ग किया गया है और संस्कृतभाषाको जिन्नभाषा कहा गया है। जबकि अरबी कोषमें हिन्दुका अर्थ खालिस अर्थात् शुद्ध होता है, न कि चोर आदि मलिन – निकृष्ट। यहूदियोंके मतमें हिन्दूका अर्थ शक्तिशाली वीर पुरुष होता है।

देहबाह्य वस्तुओंको अनात्मा समझकर, नीतिसम्मत जीवन-यापनकी लोकसम्मत स्वस्थविधाका नाम चार्वाकदृष्टिसे **हिन्दुधर्म** है।

देहके अनात्मत्वका निश्चयकर, संयमशील होकर विज्ञानभावित शून्यकल्प मनःस्थितिका नाम बौद्धदृष्टिसे **हिन्दुधर्म** है ।

देहातिरिक्त आत्माकी सूक्ष्मताका निश्चयकर तपोमय जीवन जीनेकी विचित्र विधाका नाम जैनदृष्टिसे **हिन्दुधर्म** है ।

साधर्म्य-वैधर्म्य और भावाभावके विवेकके अमोघ प्रभावसे दुःखविमुक्त होनेकी नीति (न्याय)- सम्मत वैशेषिक विधा **सनातन हिन्दुधर्म** है ।

प्रकृति तथा प्राकृत दृश्यप्रपञ्चसे अतीत पुरुषके अधिगमके अविरुद्ध और अनुकूल जीवनकी स्वस्थविधा साङ्ख्यसम्मत **सनातन हिन्दुधर्म** है ।

क्लेशप्रद और क्लेशसंज्ञक अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेशसे, शुभाशुभ कर्मोंसे, सुख-दुःखरूप विपाक (फल)

से और शुभाशुभ संस्काररूप आशयसे विरक्त मनको क्लेश-कर्म-विपाक - आशयसे असंस्पृष्ट पुरुषविशेषरूप पुरुषोत्तमकी उपासनाके अमोघ प्रभावसे प्रकृतिसारूप्यविनिर्मुक्त मोक्षोपयुक्त बनानेका सुयोग योगदृष्टिसे **सनातन हिन्दुधर्म** है ।

तद्वत् देहेन्द्रियप्राणान्तःकरणके शोधक यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार तथा धारणा, ध्यान और समाधिरूप अष्टाङ्गयोगके सेवनसे जीवनको काम, क्रोध, लोभकी दासतासे विमुक्त, शुद्ध, सन्तुष्ट, संयत, स्वस्थ, शान्त और विवेकयुक्त बनानेकी स्वस्थविधाका नाम **हिन्दुधर्म** है ।

तद्वत् साकार - निराकार, सगुण-निर्गुण और चिज्जडके विवेकसे मण्डित पुरुषसारूप्य सम्पन्न जीवनकी उज्ज्वल संज्ञा **हिन्दुधर्म** है।

दिव्याचरण और यज्ञादिके अनुष्ठानसे अभिलषित सुखकी अभिव्यक्तिकी अनुपम मीमांसाका नाम **वैदिक धर्म** है ।

वेदविहित यज्ञादिके अनुष्ठानसे जीवनको दिव्य तथा दुःखसंयोगविहीन बनानेकी स्वस्थविधा मीमांसादृष्टिसे **सनातन हिन्दुधर्म** है ।

नीति, प्रीति, स्वार्थ और परमार्थके सामञ्जस्यसे सम्पन्न दिव्य जीवनकी स्वस्थ विधा **हिन्दुधर्म** है ।

सत्सङ्ग, संयम, स्वाध्याय, यज्ञ, तप, व्रत और जपादिके द्वारा लौकिक, भौतिक और प्राकृत मनमें अलौकिकता, अभौतिकता और अप्राकृतताका आधानकर उसे अद्वय प्रत्यगात्मस्वरूप सच्चिदानन्दमें प्रतिष्ठित करनेका चरम सिद्धान्त **वेदान्तसम्मत हिन्दुधर्म** है।
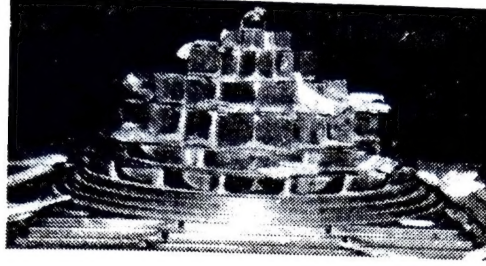
५. भारतका ऋग्वेदसम्मत नाम 'सप्तसिन्धु', 'सिन्धु ' अर्थात् 'हिन्दु'

भारतका नाम ऋग्वेदमें 'सप्तसिन्धु ' या संक्षिप्त नाम 'सिन्धु' आया है , न कि 'आर्यावर्त' या 'भारतवर्ष'। वेदोंमें **'सप्तसिन्धवः'** देशके अतिरिक्त किसी देशका स्पष्ट उल्लेख नहीं है। सनातनप्रसिद्धिके अनुसार वे सातों नदियाँ अखण्ड भारतको द्योतित करती हैं–

''गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति!
नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेऽस्मिन् सन्निद्धिं कुरु।।
पुष्कराद्यानि तीर्थानि गङ्गाद्याः सरितस्तथा।
आगच्छन्तु महाभागाः स्नानकाले सदा मम।।''
(नारदपुराण पूर्व० २७.३३,३४)

''हे गङ्गे, यमुने, गोदावरि, सरस्वति, नर्मदे, सिन्धु तथा कावेरि ! इस जलमें सन्निहित हो।।''

''पुष्कर आदि तीर्थ और गङ्गादि परम सौभाग्यशालिनी सरिताएँ सदा मेरे स्नानकालमें यहाँ पधारें।।''

इनमें गङ्गा, यमुना, सरस्वती – ये तीन पूर्वोत्तर भारतकी नदियाँ हैं। 'गोदावरी' दक्षिण और पश्चिम भारतकी नदी है। 'नर्मदा' मध्य और पश्चिम भारतकी नदी है। 'सिन्धु' – पश्चिमोत्तर भारतकी नदी है। 'कावेरी' दक्षिण भारतकी नदी है।

पश्चिमी पञ्जाबमें स्थित 'सिन्धु'– नदी प्राचीन कालमें हमारी स्वाभाविक सीमा थी। सिन्धु नदी और कराँचीका सिन्धु (समुद्र) हमारी

जलीय सीमाके सनातन मानबिन्दु हैं। इन पर भारतका आधिपत्य अनिवार्य है। 'सप्तसिन्धु' को 'हप्तहिन्दु ', तद्वत् 'सिन्दु' को हिन्दु – कहनेकी वैदिक विधा है। वर्णमालामें श, ष, स और ह – का साहचर्य है। **'सेर्ह्यपिच्च' (पाणिनीय ३.४.८७)** सूत्रानुसार **'सि'** को **हि** तथा **''ह एति '' (पाणिनीय ७.४.५२)** के अनुसार ' **स** ' को ' **ह** ' प्राप्त होता है। तदनुसार अस्मद् शब्दके सु में **'त्वाहौ सौ'** से **'अस्म '** के स्थानपर **'अह'** और पुनः **'अहम्'** बनता है। जिसका हिन्दी रूपान्तर 'हम' है।

कुछ महानुभावोंने स्वात, गोमती, कुमा, वितस्ता, चन्द्रभागा, इरावती और सिन्धुको भी सप्तसिन्धु या हप्तहिन्दु तथा हप्तहिन्द माना है।

वस्तुतः विशालपर्वत हेमकूट ही कैलास नामसे प्रसिद्ध है। वहीं कुबेरजी गुह्यकोंके साथ सानन्द निवास करते हैं। कैलाससे उत्तर मैनाक है। उससे भी उत्तर दिव्य तथा महान् मणिमय पर्वत हिरण्यशृङ्ग है। उसके सन्निकट विशाल, दिव्य, उज्ज्वल तथा काञ्चनमयी बालुकासे सुशोभित रमणीय बिन्दुसरोवर है। वहीं भगीरथने गङ्गाका दर्शन करनेके लिये बहुत वर्षोंतक तप किया था। वहाँ बहुत – से मणिमय यूप तथा सुवर्णमय चैत्य (महल) शोभा पाते हैं। वहीं यज्ञ करके महा यशस्वी इन्द्रने सिद्धि प्राप्त की थी। उस स्थानपर लोकस्रष्टा प्रचण्ड तेजस्वी सनातन सर्वेश्वरकी विविध प्राणियों द्वारा उपासना की जाती है। नर, नारायण, ब्रह्मा, मनु तथा सदाशिवका वह निवासस्थल है। ब्रह्मलोकसे उतरकर त्रिपथगामिनी दिव्य नदी गङ्गा सर्व प्रथम उस बिन्दुसरोवरमें ही प्रतिष्ठित हुई थी। वहींसे उसकी सिन्धु आदि सप्त (सात) धाराएँ विभक्त हुईं हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं – विस्वोकसारा – नलिनी, पावनी, सरस्वती, जम्बूनदी, सीता, गङ्गा और सिन्धु । इन सप्त धाराओंका प्रादुर्भाव सर्वेश्वरका ही अचिन्त्य, सुन्दर और दिव्य विधान है। यहाँ याज्ञिक कल्पान्तपर्यन्त यज्ञानुष्ठानके द्वारा परमेश्वरकी उपासना करते

हैं। इन सात धाराओंमें जो सरस्वती नामवाली धारा है, वह कहीं दृश्य तथा कहीं अदृश्य है। ये सात धाराएँ त्रिभुवनमें विख्यात हैं। –

"हेमकूटस्तु सुमहान् कैलासो नाम पर्वतः।
यत्र वैश्रवणो राजन् गुह्यकैः सह मोदते।।
अस्त्युत्तरेण कैलासं मैनाकं पर्वतं प्रति।
हिरण्यशृङ्गः सुमहान् दिव्यो मणिमयो गिरिः।
तस्य पार्श्वे महद् दिव्यं शुभ्रं काञ्चनवालुकम्।।
रम्यं बिन्दुसरो नाम यत्र राजा भगीरथः।
द्रष्टुं भागीरथीं गङ्गामुवास बहुलाः समाः।।
यूपा मणिमयास्तत्र चैत्याश्चापि हिरणमयाः।
तत्रेष्ट्वा तु गतः सिद्धिं सहस्राक्षो महायशाः।।
स्रष्टा भूतपतिर्यत्र सर्वलोकैः सनातनः।।
उपासते तिग्मतेजा यत्र भूतैः समन्ततः।
नरनारायणौ ब्रह्मा मनुः स्थाणुश्च पञ्चमः।।
तत्र दिव्या त्रिपथगा प्रथमं तु प्रतिष्ठिता।
ब्रह्मलोकादपक्रान्ता सप्तधा प्रतिपद्यते।।
विस्वोकसारा नलिनी पावनी च सरस्वती।
जम्बूनदी च सीता च गङ्गा सिन्धुश्च सप्तमी।।
अचिन्त्या दिव्यसंकाशा प्रभोरेषैव संविधिः।
उपासते यत्र सत्रं सहस्रयुगपर्यये।।
दृश्यादृश्या च भवति तत्र तत्र सरस्वती।
एता दिव्याः सप्त गङ्गास्त्रिषु लोकेषु विश्रुताः।।"

(महाभारत – भीष्मपर्व ६. ४१ – ५०)

उक्त रीतिसे सप्त गङ्गामें सिन्धु भी परिगणित होनेके कारण सप्त गङ्गाको सप्त सिन्धु कहना भी युक्त है।

श या स – को ह – कहनेकी विधा शास्त्रसम्मत है। **'श्रीश्च' (यजुर्वेद ३१.२२), 'ह्रीश्च ' (कृष्णयजुर्वेद तै. ३१.१), 'शिरासन्धिसन्निपाते रोमावर्तोऽधिपतिः' (सुश्रुत ६.७१), 'हिरालोहितवाससः' (अथर्व ५.१७.१), 'सरस्वति '(ऋक् १०.७५.७), हरस्वती ' (ऋक् २.२३. ६) , 'अमूर्या यन्ति योषितो हिरा : / शिरा : लोहितवाससः'** आदि उदाहरणोंके अनुशीलनसे यह तथ्य सिद्ध है। **''सरितो हरितो भवन्ति, सरस्वत्यो हरस्वत्यः''(निघण्टु १.१३)** के अनुशीलनसे यह तथ्य सिद्ध है कि **'सरितः'** के सदृश ही **'हरितः'** भी नदीका नाम मान्य है। **यथा – 'सरिते' (ऋक् – परिशिष्ट), ' हरितः' (अथर्व १३.२.२५), 'हरितो न रंह्याः' (अथर्ववेद २०.३०.४), 'यं वहन्ति हरितः सप्त' (अथर्ववेद १३.२.२५)** के अनुसार **'हरितः'** और **'सरितः'** में अर्थभेद नहीं है।

उक्तरीतिसे सिन्धुके तुल्य हिन्दु भारतका प्राचीन नाम सिद्ध होता है।

ईसामसीहको ईसामहीह तथा पैगम्बर मूसाको मूहा कहनेकी प्रथा वैदेशिकोंके यहाँ नहीं है।

इन्दुका अर्थ चन्द्र है। अत एव वाल्मीकीय रामायणमें सिन्धुनदीका नाम इन्दुमती आया है। **सिन् का अर्थ इन्दु है। 'सिन् ' – धुः , सिन्धुः का अर्थ चन्द्रधारक है।** समुद्रमन्थनसे चन्द्रमाका प्रादुर्भाव और चन्द्रदर्शनसे समुद्रका उल्लास तथा चन्द्रकलाकी शीतलता – आदि हेतुओंसे यह तथ्य सिद्ध है। सिन् का अर्थ चन्द्र होनेके कारण ही सिनीका अर्थ चन्द्रकला तथा अमावास्याका नाम सिनीवाली है। **'सिनिवालि! पृथुष्टके' (ऋक् २.३२.६), 'तस्मै हविः सिनीवाल्यै जुहोतन ' (ऋक् २.३२.७), 'या सिनीवाली या राका ' (ऋक् २.३२.८)** – आदि श्रुतियोंके अनुशीलनसे यह तथ्य सिद्ध है।

उक्त रीतिसे सिन्धुके तुल्य इन्दुसे भी इस देशका नाम हिन्दु होना स्वाभाविक है। भूतभावन शिव इन्दु और सिन्धुसंज्ञक गङ्गाको शिरपर धारण करते हैं। अतः शिवाराधक आर्योंका यह देश सिन्धु या हिन्दु है। 'धु' के तुल्य 'दु' – का अर्थ धारक है। अतः सिन्धु और हिन्दुमें साम्य है। सिन् और हिन् समानार्थक है। हिङ्कार, प्रस्ताव, आदि, उद्गीथ, प्रतिहार, उपद्रव और निधन – संज्ञक सप्तविध या हिङ्कार, प्रस्ताव, उद्गीथ, प्रतिहार और निधन – संज्ञक पञ्चविध साममें हिङ्काररूप प्रथम सामगत हिन् –से सिन् का साम्य है। सिन् सोम है। इन्दु – संज्ञक सोमात्मक चन्द्रकी उज्ज्वल – स्फूर्ति सोमलता सोमयज्ञके सम्पादनमें मुख्य घटक है। अभिप्राय यह है कि "**न असामा यज्ञोऽस्ति**" **(शतपथब्राह्मण १.४.३.१-२)** के अनुसार सामविरहित यज्ञ नहीं। तथा '**हिङ्कृत्वा अन्वाह ...न वा अ हिं कृत्वा साम गीयते**' **(शतपथब्राह्मण १.४.३.१-२)** के अनुसार हिन् – विरहित साम नहीं। अतः सिन् – संज्ञक हिन् को धारण करनेवाली अर्थात् यज्ञानुष्ठान करनेवाली याज्ञिकजाति सिन्धु, हिन्धु या हिन्दु नामसे प्रसिद्ध हुई। काव्यप्रकाशादिके अनुसार प्राणप्रद–जीवनाधायक धर्मका नाम जाति है।

विवक्षावशात् यज्ञधारक या गोधारकका नाम हिन्दु है। '**हिं**' – या '**हिन्**' का उच्चारण करके सामवेदका उच्चारण सम्भव है। सामोच्चारणके बिना यज्ञानुष्ठान असम्भव है। अत एव हिङ्कार यज्ञका प्राण अर्थात् धारक कहा गया है –

"हिं – कृत्वा अन्वाह, न असामा यज्ञोस्ति इति आहुः। न वा अ- हिङ्कृत्वा साम गीयते। प्राणो वै हिङ्कारः।"

(शतपथब्राह्मण १.४.३.१,२)

हिङ्कार – गोवंशका द्योतक है। गाय यज्ञधारक होनेसे पृथिवीको धारण करनेवाली है। वह अपने वत्सके पास हिङ्कार करती हुई शीघ्र आ जाती है। वह दुग्ध, दधि, मक्खन तथा घृतादि निधिके माध्यमसे हमारा

पोषण और परिपालन करती है। वह अहननीया है। वह हमारी मङ्गलकामनाके फलस्वरूप सदा दुग्धसे सम्पन्न रहकर हमारे उत्कर्षमें हेतु सिद्ध होती है -

''हिं - कृण्वन्ती वसुपत्नी वसूनां वत्समिच्छन्ती मनसाभ्यागात्।
दुहामश्विभ्यां पयो अघ्न्येयं सा वर्धतां महते सौभगाय।।''
(ऋक् १.१६४.२७, अथर्व. ९.१०.५)

गोग्रास, गोपूजन, गोपाष्टमी, गोलोक, गोपाल, गव्य, गोमय, गोत्र, गोष्ठी, गोधूलि , वात्सल्य आदि - शब्द गोभक्तिका द्योतक है।

पृथ्वीके धारक तथा यज्ञादिके सम्पादक गोवंश, विप्र, वेद, सती, सत्यवादी, निर्लोभ तथा दानशील - संज्ञक सात व्यक्तियोंमें गोवंशका नाम प्रथम है। -

''गोभिर्विप्रैश्च वेदैश्च सतीभिः सत्यवादिभिः।
अलुब्धैर्दानशीलैश्च सप्तभिर्धार्यते मही।।''
(स्कन्दपुराण - काशीखण्ड २.९०,
माहेश्वरकुमारिकाखण्ड २.७२)

गोवंश अवध्य है -

''अघ्न्या इति गवां नाम क एता हन्तुमर्हति।
महच्चकाराकुशलं वृषं गां वाऽऽलभेत् तु यः।।''
(महाभारत - शान्तिपर्व २६२.४७)

''. **'अघ्न्यम्' (ऋक् १. ३७.५), 'नीचीनमघ्न्या दुहे' (ऋक् १०. ५. ६०.११) , 'अघ्न्येयं सा वर्द्धतां सौभगाय' (ऋक् १.२२.१६४.२७)** - 'न मारने योग्य आयी हुई यह गाय हमारे महान् सौभाग्यके लिए दूध बढ़ावे ' आदि वचनोंके अनुशीलनसे यह तथ्य सिद्ध है कि श्रुतियोंमें गौओंको अघ्न्या - अवध्य कहा गया है, अतः कौन उनके वधका विचार करेगा? जो पुरुष गाय और बैलोंका वध करता है, वह महान् पाप करता है।। ''

गोसूक्त (अथर्व . ४.२१)

**माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ठ।।
(ऋक्० ८.१०१.१, पा.गृ.सू. १.३.२७)
(अथर्ववेद ४.२१.१)**

''गाय रुद्रोंकी माता, वसुओंकी पुत्री, अदिति पुत्रोंकी बहिन और घृतरूप अमृतकी निधि (खजाना)है। प्रत्येक विचारशील पुरुषको मैंने यही कहा है कि निरपराध एवं अवध्य गौका वध मत करो।। ''

**आ गावो अग्मन्नुत भद्रमक्रन्त्सीदन्तु गोष्ठे रणयन्त्वस्मे।
प्रजावतीः पुरुरूपा इह स्युरिन्द्राय पूर्वीरुषसो दुहानाः।।
(अथर्ववेद ४.२१.२)**

''गौओंने हमारे यहाँ आकर हमारा कल्याण किया है। ये हमारी गोशालामें सुखसे बैठें और उसे अपने शब्दोंसे गुँजा दें। ये विविध रङ्गोंकी गौएँ अनेक प्रकारके बछड़े – बछड़ियाँ जनें तथा इन्द्रसंज्ञक परमात्माके यजनके लिये उषःकालसे पहले दूध देनेवाली हों।। ''

**न ता नशन्ति न दभाति तस्करो नासामामित्रो व्यथिरा दधर्षति।
देवांश्च याभिर्यजते ददाति च ज्योगित्ताभिः सचते गोपतिः सह।।
(अथर्ववेद ४.२१.३)**

''वे गौएँ न तो नष्ट हों, न उन्हें चोर चुरा ले जाय, न शत्रु ही कष्ट पहुँचाये। जिन गौओंकी सहायतासे उनका स्वामी देवताओंका यजन करने तथा दान देनेमें समर्थ होता है, उनके साथ वह चिरकालतक सुरक्षित रहे।।''

**गावो भगो गाव इन्द्रो म इच्छाद्गावः सोमस्य प्रथमस्य भक्षः।
इमा या गावः स जनास इन्द्र इच्छामि हृदा मनसा चिदिन्द्रम्।।
(अथर्ववेद ४.२१.४)**

''गौएँ हमारा मुख्य धन हों, इन्द्र हमें गोधन प्रदान करें। यज्ञोंकी प्रधान वस्तु सोमरसके साथ मिलकर गौओंका दूध ही उनका नैवेद्य बने।

जिसके पास ये गौएँ हैं, वह तो एक प्रकारसे इन्द्र ही है। मैं अपने श्रद्धायुक्त मनसे गव्य पदार्थोंके द्वारा इन्द्रसंज्ञक प्रभुका यजन करना चाहता हूँ।।''

यूयं गावो मेदयथा कृशं चिदश्रीरं चित्कृणुथा सुप्रतीकम्।
भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो बृहद् वो वय उच्यते सभासु।।
(अथर्ववेद ४.२१.५)

''गौओ! तुम कृश शरीरवाले व्यक्तिको हृष्ट – पुष्ट कर देती हो तथा तेजोहीनको दर्शनीय बना देती हो। इतना ही नहीं, तुम अपने मङ्गलमय शब्दसे हमारे घरोंको मङ्गलमय बना देती हो। अत एव सभाओंमें तुम्हारे ही यशका गान होता है।।''

प्रजावतीः सूयवसे रुशन्तीः शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबन्तीः।
मा व स्तेन ईशत माघशंसः परि वो रुद्रस्य हेतिर्वृणक्तु।।
(अथर्ववेद ४.२१.६)

''गौओ! तुम बहुत–से बच्चे जनो।चरनेके लिए तुम्हें सुन्दर चारा प्राप्त हो। सुन्दर जलाशयमें तुम शुद्ध जल पीती रहो। तुम चोरों तथा दुष्ट हिंसक जीवोंके चंगुलमें न फँसो। रुद्रका शस्त्र तुम्हारी सब ओरसे रक्षा करे।।''

गोवर्णनपरक **''हिं – कृण्वन्ती वसुपत्नी वसूनां वत्समिच्छन्ती मनसाभ्यागात्। दुहामश्विभ्यां पयो अघ्न्येयं सा वर्धतां महते सौभगाय।।'' (ऋक् १.१६४.२७, अथर्व. ९.१०.५)** इस मन्त्रमें पूर्वार्द्धका आदिम **''हिं – कृण्वन्ती''** में प्रयुक्त **'हिं'** और उत्तरार्द्ध **''दुहामश्विभ्यां पयः''** का आदिम **'दु'** अक्षर मिलकर **हिन्दु** होता है। जिसका अर्थ गोभक्त होता है। दूरस्थित अक्षर या पद भी अर्थसम्बन्धसे एकत्र माना जाता है। यह आर्ष – निरूपित (आप्तप्रतिपादित) शास्त्रसम्मत सिद्धान्त है–

यस्य येनार्थसम्बन्धो दूरस्थस्यापि तस्य सः।
अर्थतो ह्यसमर्थानामानन्तर्यमकारणम्।।
(न्यायदर्शन – भाष्य १.२.९)

असत्यां हि आकाङ्क्षायां सन्निधानमकारणं भवति।
यथा भार्या राज्ञः पुरुषो देवदत्तस्य।।
(मीमांसादर्शन – शाबरभाष्य ६.४.३३)

इस प्रकार यह सिद्ध हुआ कि **"सत्यां हि आकाङ्क्षायां असन्निधानमपि सम्बन्धकारणं भवति।"** – "आकाङ्क्षा रहनेपर असन्निधान भी सम्बन्धका कारण होता है।"

माण्डूक्योपनिषत् के अनुशीलनसे यह तथ्य सिद्ध है कि **'आप्तेरादिमत्त्वात् , उत्कर्षत्वाद् उभयत्वाद् वा , मितेः '** (९ - ११) के क्रमशः प्रथमाक्षर अ, उ और म् के योगसे ओम् की सिद्धि होती है।

बृहदारण्यकोपनिषत् ५.३.१ के अनुसार **'हरन्ति, ददति, यम्'** गत 'हृ, 'द 'और 'य' के योगसे हृदय – शब्दकी संरचना मान्य है। आहरण, दान तथा गत्यर्थक हृदय शब्द है। इन्द्रियाँ वीणा, मोदकादि अभिव्यञ्जक संस्थानगत शब्दादि विषयोंका आहरणकर हृत्पुण्डरीकमें सन्निहित बुद्धिको समर्पित करती हैं। बुद्धि शब्दादि विषयक ज्ञानको अपने प्रेरक तथा प्रकाशक भोक्ताको प्रदान करती है। **छान्दोग्योपनिषत् ८.३.४,५** के अनुसार **'तस्य ह वा एतस्य ब्रह्मणो नाम सत्यमिति। तानि ह वा एतानि त्रीण्यक्षराणि सतीयमिति यद्यत्सत्तदमृतमथ यत्ति तन्मर्त्यमथ यद्यं तेनोभे यच्छति , यदनेनोभे यच्छति तस्माद्यमहरहर्वा एवंवित्स्वर्गं लोकमेति।'** – ब्रह्मात्मतत्त्वका नाम सत्य है। **'स' ,'ति' , 'यम्'** के योगसे सत्यम् की सिद्धि मान्य है। इनमें **'सत् '** – अमृत है। **'ति'** – मर्त्य है। **'यम्'** – दोनोंका नियामक है। **छान्दोग्योपनिषत् ८.३.३** के अनुसार **'स वा एष आत्मा हृदि तस्यैतदेव निरुक्तं हृदयमिति,**

तस्माद्धृदयमहरहर्वा एवंवित्स्वर्गं लोकमेति।'- हृदि अयम् ' गत 'हृ', 'द ' और 'य ' के योगसे हृदय – शब्दकी संरचना मान्य है। हृदयाकाशमें चिदाकाशस्वरूप परमात्माकी प्रत्यगात्मरूपसे स्फूर्तिके कारण परमात्माकी हृदय संज्ञा है। **'अयं हृदि स्थितः साक्षी सर्वेषामविशेषतः। तेनायं हृदयं प्रोक्तः शिवः संसारमोचकः'(पञ्चब्रह्मोपनिषत् ३६)** के अनुशीलनसे भी इसी तथ्यकी पुष्टि होती है। तद्वत् **बृहदारण्यकोपनिषत् ५. २. १-३** के अनुसार **'दाम्यत, दत्त, दयध्वम् '** गत प्रथमाक्षर दकारत्रयके योगसे द. द. द. की निष्पत्ति मान्य है। जिससे दम (मनोनिग्रह, इन्द्रिय – संयम), दान और दया – रूप शीलत्रयकी सिद्धि सम्भव है। दमसे देवगत भोगलिप्साका, दयासे दैत्यगत निर्दयताका और दानसे मनुष्यगत कदर्यताका शमन होता है।

लोकमें भाजपा (भारतीय जनता पार्टी), सपा (समाजवादी पाटी), बसपा (बहुजनसमाजपार्टी), विहिप (विश्वहिन्दूपरिषद्) – आदि सहस्रों शब्द प्रसिद्ध हैं।

पी. एम. (प्राइम मिनिस्टर), सी. एम. (चीफ मिनिष्टर) आदि संक्षिप्त शब्दोंकी अङ्ग्रेजीमें भरमार है।

न्यूज (News) में सन्निहित प्रथमाक्षरके योगसे निष्पन्न शब्दका अर्थ 'चतुर्दिक् (क्रमशः नोर्थ, ईष्ट, वेस्ट, साउथ – उत्तर, पूर्व, पश्चिम, दक्षिण) का वृत्तान्त ' होता है।

हिन्दी – भाषा तथा हिन्दु – जाति, यह नाम हिन्दु – देशके अनुरूप है।

लोकमें अवान्तरभेद और समष्टिसमुल्लेख – दोनों विधा प्रशस्त है। **स्थावर - जङ्गम** अवान्तर भेद हैं और **प्राणी** समष्टिसमुल्लेख है। तरु, लता, गुल्मादि अवान्तर भेद हैं और उद्भिज्जसंज्ञक स्थावर समष्टि समुल्लेख है। **स्वेदज, अण्डज, जरायुज** अवान्तर भेद हैं और **जङ्गम**

समष्टि उल्लेख है। तद्वत् क्रिश्चियन, मुसलमान, पारसी, हिन्दु अवान्तर भेद हैं और मनुष्य समष्टि उल्लेख है। वैदिक, अवैदिक , सिक्ख, जैन, बौद्ध , ब्रह्मणादि अवान्तर भेद हैं और हिन्दु समष्टिसमुल्लेख है।

सामान्यसे विशेषके अस्तित्वकी सिद्धि होती है और विशेषसे सामान्यकी उपयोगितामें वृद्धि होती है। सुवर्णसे सुवर्णाभूषणके अस्तित्वकी सिद्धि होती है और कटक, मुकुट, कुणडलादि आभूषणोंसे सुवर्णसामान्यकी उपयोगिता होती है। तद्वत् हिन्दुसे सिक्ख, जैन, बौद्ध तथा ब्राह्मणादिके अस्तित्वकी सिद्धि होती है और सिक्ख, जैन, बौद्ध तथा ब्राह्मणादिसे हिन्दुकी उपयोगिता होती है।

सर्ववेदमय आत्मयोगी सच्चिदानन्दस्वरूप सर्वेश्वरकी प्रेरणाके अनुरूप उनके परम उद्दीप्त नाभिकमलमें कल्पान्तकालसे सन्निहित प्रजाकी पूर्व कल्पानुरूप रचना करनेवाले श्रीमन्नारायणके नाभिकमलसे समुद्भूत हिरण्यगर्भात्मक ब्रह्मा सबके पूर्वज हैं और श्रीमन्नारायण उनके भी पूर्व। पद्मनाभसमुद्भूत ब्रह्मा स्वयम्भू हैं और श्रीमन्नारायण स्वयम्। उन सनातनधर्मरक्षक श्रीमन्नारायणको नमस्कार है–

तस्य नाभेरभूत्पद्मं सहस्त्रार्कोरुदीधिति।
सर्वजीवनिकायौको यत्र स्वयमभूत्स्वराट्।।
सोऽनुविष्टो भगवता यः शेते सलिलाशये।
लोकसंस्था यथापूर्वं निर्ममे संस्थया स्वया।।
(श्रीमद्भागवत ३. २०. १६,१७)

"यथेदानीं तथाग्रे च पश्चादप्येतदीदृशम्।"
(श्रीमद्भागवत ३.१०.१३)

"सर्ववेदमयेनेदमात्मनाऽऽत्माऽऽत्मयोनिना।
प्रजाः सृज यथापूर्वं याश्च मय्यनुशेरते।।"
(श्रीमद्भागवत ३.९.४३)

''अन्तर्हिते भगवति ब्रह्मा लोकपितामहः।
प्रजाः ससर्ज कतिधा दैहिकीर्मानसीर्विभुः।।''
(श्रीमद्भागवत ३.१०.१)

''तस्मै नमो भगवते य इदं स्वेन रोचिषा।
आत्मस्थं व्यञ्जयामास स धर्मं पातुमर्हति।।''
(श्रीमद्भागवत ३.१२.३२)

''त्वत्तः सनातनो धर्मो रक्ष्यते तनुभिस्तव।
धर्मस्य परमो गुह्यो निर्विकारो भवान्मतः।।''
(श्रीमद्भागवत ३.१६.१८)

हिन्दू सबके पूर्वज हैं । विश्वके सभी मनुष्य श्रीमन्नारायणके नाभिकमलसे अभिव्यक्त ब्रह्माजीके श्रीविग्रहसे प्रादुर्भूत मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु, वसिष्ठ, दक्ष, स्वायम्भुव मनु और शतरूपादिकी परम्परामें ही उत्पन्न हुए हैं।

इतरास्तु व्यजायन्त गन्धर्वांस्तुरगान् द्विजान्।
गाश्च किम्पुरुषान्मत्स्यानुद्भिज्जांश्च वनस्पतीन्।।
(महाभारत - शान्तिपर्व२०७.२५)

"दक्षप्रजापतिकी बहुत –सी कन्याएँ हुईं, जिन्होंने गन्धर्वों, अश्वों, पक्षियों, गाओं, किम्पुरुषों, मत्स्यों, उद्भिज्जों और वनस्पतियोंको जन्म दिया।।"

अग्निदेहसे, ब्रह्मवीर्यसे और वरुणभावापन्न यजमानके यज्ञसे समुद्भूत आग्नेय अङ्गिरा, ब्राह्म कवि और वारुण भृगु विशेषकर अङ्गिरा और भृगु सृष्टिविस्तारक प्रजापति हैं। यह सम्पूर्ण विश्व इन्हींकी सन्तति है–

भार्गवाङ्गिरसौ लोके लोकसन्तानलक्षणौ।।

एते हि प्रसवाः सर्वे प्रजानां पतयस्त्रयः।
सर्वं सन्तानमेतेषामिदमित्युपधारय।।

(महाभारत-अनुशासनपर्व ८५.१२६- १२७)

कर्म और शिक्षाभूमि देवदुर्लभ भारतवर्ष और अग्रज ब्राह्मणोंसे दूरीके कारण अर्थात् आचार और विचारमें शिथिलता और न्यूनताके कारण क्षत्रियादिसे शक, किरात, यवन और चीन आदि अन्य समुदायकी अभिव्यक्ति हुई ।

शनकैस्तु क्रियालोपादिमाः क्षत्रियजातयः ।
वृषलत्वं गता लोके ब्राह्मणादर्शनेन च ।।

(मनुस्मृति १०.४३)

अत एव अपने पूर्वज हिन्दुओंके प्रति आस्थान्वित होना मानवमात्रका दायित्व है ।

स्वतन्त्र भारतमें लोभ, भय, द्रोह, कोरी भावुकता और भ्रमके वशीभूत जैन, बौद्ध, सिक्ख, अन्त्यजादि अपने उद्गमस्रोतसे वियुक्त होकर अपने अस्तित्व तथा आदर्शको विलुप्त कर रहे हैं और ब्राह्मणादि इनसे विहीन होकर अङ्गहीन क्षीण हो रहे हैं। सद्भावपूर्ण सम्वादके माध्यमसे भ्रम तथा भूलका निवारण और सैद्धान्तिक सामञ्जस्य आवश्यक है।